वार्षिक शुल्क रु. ३०/-
आजीवन शुल्क रु. ५००/-

बुद्धवर्ष २५५०, कार्तिक पूर्णिमा, ५ नवंबर, २००६ वर्ष ३६ अंक ५

Hindi Patrika on Website: www.vri.dhamma.org/NewslettersHindi/index.html

धम्मवाणी

अप्पमादो अमतपदं, पमादो मच्चुनो पदं।
अप्पमत्ता न मीयन्ति, ये पमत्ता यथा मता॥
धम्मपद – २१

प्रमाद न करना अमृत (निर्वाण) का पद है और प्रमाद मृत्यु का पद। प्रमाद न करने वाले (कभी) मरते नहीं और प्रमादी (तो) मरे-समान होते हैं।

उद्‌बोधन

धातु सन्निधान

असीम हर्ष-उल्लास के माहौल में मुंबई के भव्य स्तूप में भगवान के धातु अवशेष के सन्निधान का संयोजन समुदित संपन्न हुआ।

आभार मानते हैं सम्राट अशोक का, जिसने २३३२ वर्ष पूर्व भगवान के पावन अस्थि अवशेष अपने साम्राज्य में स्थान-स्थान पर धातुगर्भ स्तूपों में सन्निधानित किया। यदि ऐसा न करते तो २३३२ वर्ष उपरांत इन अवशेषों का समुचित सम्मान करते हुए वैश्विक विपश्यना पगोडा में सन्निधानित कैसे कर पाते?

आभार मानते हैं ब्रिटिश सरकार का, जिसने उन्हें किसी धातु-गर्भ-स्तूप में से निकाल कर स्वदेश ले जाने के बावजूद अपनी भूल सुधारते हुए भारत की महाबोधि सोसायटी को सादर समर्पित कर दिया। ऐसा न करके हठधर्मीपूर्वक यदि इन्हें लंदन के म्युजियम में ही अपमानजनक अवस्था में प्रदर्शित करते रहते तो हमें इस पावन सन्निधान का सुअवसर कैसे प्राप्त होता?

उपकार मानते हैं भारत की महाबोधि सोसायटी का, जिसने कृपापूर्वक पावन अवशेष हमें प्रदान किये, अन्यथा हम इन्हें यथोचित सम्मानपूर्वक विश्व के इस विशालतम गुंबज वाले धातुगर्भ के उचित स्थान पर सन्निधानित कैसे करते और इतनी बड़ी संख्या में उपस्थित जनसमूह इस ऐतिहासिक कार्यक्रम में सम्मिलित होकर इनका उचित सम्मान कर पुण्यलाभी कैसे होता? भविष्य में भी सदियों तक इसके सम्मान में श्रद्धालु लोग श्रद्धा के सुमन चढ़ा कर और विपश्यी साधक ध्यान के लिए गुंबज में बैठ कर इन पवित्र धातु की धर्मतरंगों से लाभान्वित होकर साधना करते हुए धर्मपथ पर आगे बढ़ने का लाभ कैसे उठा पाते?

सन्निधान के इस ऐतिहासिक अवसर पर श्रद्धालु लोगों का प्रसन्नताभरा उत्साह दर्शनीय था। एक ओर इस भव्य स्तूप में सैंकड़ों, हजारों, लाखों, करोड़ों तक का दान देने वाले धनियों के खिले हुए चेहरे तो दूसरी ओर गरीबी रेखा से नीचे स्तर पर मुंबई की झोपड़पट्टियों में रहने वाले मजदूरों की अपूर्व दानचेतना। किसी ने देखा कि इन निर्धन महिलाओं ने जब अपनी साड़ी के पल्ले में से चवन्नी, अठन्नी या रुपये के सिक्के को श्रद्धा के साथ निकाल कर दानपेटी में डाला तब देखने वालों की आंखें गीली हो गयीं। इसी प्रकार बिना किसी अन्य के आग्रह या सुझाव के दिये जाने वाले दान का एक और उत्तम उदाहरण सामने आया जबकि तिहाड़ जेल के विपश्यी (बंदी) साधकों ने मिलजुल कर लगभग १५००/- रुपये की राशि स्वयं स्फूर्त और स्वप्रेरणा द्वारा एकत्र करके दान के लिए भेजी। धन्य है साधकों की भावना! दान के प्रति उनकी चेतना, श्रद्धा, शील और साधना!

दानं ददन्तु सद्धाय, सीलं रक्खन्तु सब्बदा।
भावनाभिरता होन्तु, एतं बुद्धानसासनं॥

यह द्वितीय बुद्ध शासन के अभ्युदय का दिव्य-दर्शन है। स्तूप के ऊपरी दो भागों का निर्माण अत्यंत श्रमसाध्य और संपदसाध्य है। परंतु इसके निर्माण के पूरा होने में अब कोई संशय नहीं है। धन्य है विपश्यना! धन्य हैं विपश्यी! धन्य है श्रद्धालुओं की दानचेतना!

द्वितीय बुद्ध शासन के धर्मोदय से सभी श्रद्धालुओं का बहुविधि मंगल हो!

मंगल मित्र,
सत्य नारायण गोयन्का

मेरे पिता सयाजी ऊ बा खिन

(ऊ तैं जां)

अपने पिता सयाजी ऊ बा खिन का इकलौता पुत्र होने के अनुरूप उनके साथ व्यक्तिगत अनुभूत घटनाओं, उनकी डायरियों से प्राप्त बिंदुओं को संस्मरण के रूप में लिखने की कामना मेरे मन में बहुत पहले से ही बनी रही। आज आप(सयाजी ऊ गोयन्काजी) के शिष्यों के कहने पर लिपिवद्ध रहा हूं।

मेरे पिता सयाजी ऊ बा खिन का निधन हुए लगभग ३५ वर्ष हो चुके। उनके शिष्य आज पर्यंत उनको भूल नहीं पाये हैं। सयाजी द्वारा बुद्ध, धर्म, संघ की निर्वाण-धातु का आह्वान करना, पुण्य-वितरण करना आदि आज भी मेरे कानों में गूंजते रहते हैं। किसी भी अप्रिय स्थिति, भय-अंतरायों के उपस्थित होने पर वे उनके शमनार्थ परित्राण-गाथाओं का पाठ किया करते थे और उससे अर्जित पुण्य का वितरण किया करते थे। स्वतंत्रता प्राप्त होते ही म्यंमा-देश के भीतर गृह-युद्ध की ज्वाला धधक उठी। करेन विद्रोहियों ने २ फरवरी, १९४९ ई. के दिन रंगून नगर के निकट स्थित **इंसिन नगर** तक अपना कब्जा कर लिया। रंगून की जनता भयभीत थी। मैंने देखा कि सयाजी भरसक अपनी ओर से जो कर सकते थे, उसे संपादित करने में लग गये। इस आसन्न-विपत्ति का निवारण करने, उसे टालने की पूर्व-सुरक्षा हेतु ५ फरवरी १९४९ के दिन प्रातः १ बजे से अधिष्ठान आरंभ कर दिया। वे लगातार दश दिनों तक उत्पात-शांति गाथाओं (उप्पातसन्तिगाथा) का पाठ करते हुए साधना और मैत्री-भावना करते रहे थे।

उस समय पिताजी महालेखाधिकारी (एकाउंटेंट-जेनरल) के पद पर थे। सभी प्राणियों के प्रति मंगल कामना करते हुए विशेषकर अपने कार्यालय के कर्मचारियों को लक्ष्य करके २७ फरवरी से ८ मार्च तक निरंतर उत्पात-शांति गाथाओं (उप्पातसन्तिगाथा) का पाठ और साधना करते हुए मैत्री-भावना करते और पुण्य-वितरण किया करते

थे। आगे उनकी डायरी में पाया कि रंगून नगर की उक्त विपदा भी टल गयी और शासकीय कर्मचारी भी कार्यालय में पूर्ववत आने लगे। सयाजी विभिन्न भय-अंतरायों से मुक्ति हेतु आवश्यकतानुसार यथासमय परित्राण-गाथाओं का पाठ, अधिष्ठान पूर्वक साधना और मैत्री-भावना किया करते थे। सयाजी द्वारा पाठ किया गया 'कुशल तिक पट्ठान, पञ्हावारविभङ्ग' का टेप उनके अनन्य शिष्य आज भी अंतरायों के निवारणार्थ सुना करते हैं।

सयाजी सन १९३७ में बहुत विकट रास्ते को पार करते हुए डला से प्यब्वेजी गांव गये। वहां **सया-तै-जी** के सान्निध्य में परंपरागत विपश्यना-साधना-विधि सीखी। बाद में अपने निवास पर, कार्यालय में, यात्रा के दौरान, जिस किसी स्थान पर पहुँचते और जब कभी भी उनको अवकाश मिलता या समय होता, विपश्यना-विधि का अभ्यास किया करते थे। सन १९४१ में उनकी भेंट **वेबू-सयाडो** से हुई। उन्होंने इनकी साधना और पारमिता को देखते हुए, इनको यह आदेश दिया कि वे विपश्यना-साधना को सिखाना प्रारंभ कर दें। इस प्रकार वे विपश्यनाचार्य हुए।

सयाजी एक ओर अपने महालेखाधिकारी पद के गुरुतर दायित्वों को संभालते थे तो दूसरी ओर आध्यात्मिक कार्य-भार का भी सकुशल संपादन करते थे। उनके कार्यालय-भवन की प्रथम मंजिल पर महालेखा अधिकारी कार्यालय-कक्ष से सटा हुआ एक २० फुट लंबा और १२ फुट चौड़ा छोटा-सा हॉल था। सयाजी अपने कार्यालय के कर्मचारियों के साथ कार्यालय खुलने के पूर्व तथा बंद होने के बाद अवकाश के समय में इस कक्ष का उपयोग ध्यान करने के लिए किया करते थे।

तत्कालीन प्रसिद्ध सयाडो (भंते, भिक्षु) को आमंत्रित कर उनके उपदेशों को श्रवण करना, संघ-दान देना आदि धार्मिक अनुष्ठानों का वे संपादन किया करते थे। इसके अतिरिक्त कार्यालय के कर्मचारियों को विपश्यना का अभ्यास करवाना, स्वयं भी धर्म-चक्र-प्रवर्त्तन दिवस, महासमय दिवस आदि अवसरों पर रेडियो से धर्म-प्रवचन का प्रसारण करना आदि का भी वे संपादन किया करते थे। बाद में जब विपश्यना केंद्र के लिये भूमि प्राप्त हो गयी तब **विपश्यना समिति** का गठन कर भविष्य में होने वाले कार्यों का संपादन किया गया।

पिताजी जब महालेखाअधिकारी थे तब ऊपरी पां-सों-डां सड़क, कां-डो-जी के पास वाले मकान में रहा करते थे। यह मकान **निवास-आवंटन विभाग** द्वारा आवंटित किया गया था। पिताजी जब तक विभिन्न बड़े शासकीय पदों पर कार्यरत रहे, तब तक यानी सेवानिवृत्ति-काल तक (१६ वर्ष पर्यंत) इसी मकान में रहे। यह मकान दु-मंजिला था। ऊपर समतल छत थी। हम लोग ऊपरी मंजिल पर रहते थे, इसलिए इसका उपयोग कर सकते थे। ऊपर छत पर शांति थी, नीरवता थी। पिताजी के लिए यह सुअवसर था। उन्होंने उस छत पर लगभाग ८-फीट लंबा और ५-फीट चौड़ा एक साधना-कक्ष बनवाया। दीवाल बांस की चटाई से बनी थी तथा छाजन ताड़-पत्रों का था। पिताजी यहीं पर साधना किया करते थे। जब तक विपश्यना केंद्र की स्थापना नहीं हुई थी, पिताजी अवकाश के समय कार्यालय में ही कर्मचारियों को विपश्यना-साधना सिखाया करते थे और घर आने पर सबेरे और सायंकाल इसी लघु साधना-कक्ष में अपनी व्यक्तिगत साधना का अभ्यास किया करते थे। इसी साधना-कक्ष में सन १९५३ के १५ जून से पिताजी ने– माताजी (धर्म पत्नी) सहित पूरे परिवार को आनापान और विपश्यना की साधना सिखायी थी।

पिताजी को कृषि-कार्यों से विशेष लगाव था। अतः ऊपर छत पर लौकी, ककड़ी, आदि सब्जी की वल्लरियां ही नहीं, फूल के विशेष पौधे भी लगाये थे। हमारा पूरा परिवार मिल-जुल कर इन पौधों की सेवा किया करता था। भविष्य में जब **अंतर्राष्ट्रीय साधना केंद्र** की स्थापना हुई, तब वहां भी उन्होंने स्वयं अपनी देख-रेख में साग-सब्जी तथा फूलों के पौधे लगवाये। केंद्र में आज जो ले-लों-पें (संकर बरगद) है वह हमारे छत पर पला हुआ एक छोटा-सा पौध था जिसे सयाजी ने केंद्र में लगवाया। एक दिन की बात है – पिताजी छत पर के उद्यान के पौधों का निरीक्षण करते हुए उनकी सेवा में लगे हुए थे। सयाजी ने अचानक पेंसिल और कागज मँगवाया और उस पर एक छोटी-सी कविता की रचना कर हमें पकड़ा दी। बाद में हमें पता चला कि वे बचपन में ही कहानी, लघु-उपन्यास, निबंध आदि लिखा करते थे। आध्यात्मिक रुचि के अनुरूप साधना का अभ्यास करने के दौरान पिताजी ने मुझे क्रिश्चियन स्कूलों में भर्ती नहीं किया बल्कि बालकों वाले म्योमा-चौं में भर्ती कराया, जहां बर्मी-संस्कृति और सभ्यता के अनुसार पढ़ाई होती है। जब मैं अच्छी तरह पढ़ने-लिखने की आयु का हुआ तो सयाजी ने बुद्ध-चरितावली संबंधी बुद्धवंस, दश बड़े जातक (भदंत आनंद कौसल्यायन कृत 'जातक' भाग-६), धम्मपद आदि धार्मिक साहित्य पढ़ने के लिए खरीद दिया। इस प्रकार मुझे शैशवकाल से ही बुद्ध-साहित्य का सान्निध्य प्राप्त हुआ।

सयाजी को महालेखाधिकारी पद से ५५ वर्ष की आयु में सेवानिवृत्त होना था परंतु शासन के आदेशानुसार बारह वर्षों तक उत्तरोत्तर सेवारत रहे। इस तरह शासकीय सेवाकाल में सयाजी एक साथ तीन-चार विभागों में अपनी सेवाएं देते रहे। इसके अतिरिक्त शासन द्वारा गठित स्थायी व अस्थायी संस्थाओं में भी दायित्वपूर्ण पदों पर कार्य करते रहे। साथ-साथ इस काल में स्थापित हो चुके **अंतर्राष्ट्रीय ध्यान केंद्र** के लिए भी उनको समय देना पड़ता था। उनके अपने कार्यालय के साधक तो आते ही थे, विदेशी साधक तथा अन्य अनेक लोग भी ध्यान-साधना करने के लिए आया करते थे। उनके लिए साधना शिविरों का संचालन करना, धर्म सिखाना, धर्म-साहित्य सृजन करना, आदि कार्यों को भी वे बखूबी संपादित किया करते थे। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि इतने अधिक उत्तरदायित्व निभा सकने की सामर्थ्य उनको विपश्यना-साधना के अभ्यास द्वारा प्राप्त होती थी।

उन दिनों कभी वे घर से कार्यालय जाते और वहां से लौटते समय सीधे ध्यान-केंद्र चले जाते, रात को वहीं ठहर जाते। साधना-शिविर के दौरान अधिकांशतः ध्यान-केंद्र पर ही रुकते थे। जैसे-जैसे साधना-शिविरों की संख्या बढ़ने लगी, वैसे-वैसे उनका घर पर आना-जाना कम होता गया और ध्यान-केंद्र पर ठहरना बढ़ गया। वे साधना-केंद्र का प्रातःकालीन कार्य-क्रम पूरा करते और वहीं से सीधे कार्यालय चले जाते थे। कार्यालय से फिर सीधे साधान-केंद्र जाते, वहां शिविर संचालन का सारा कार्य करते, धर्म-प्रवचन देते। रात को वहीं रहते। इस तरह बिना विराम काम करते ही रहते थे। अक्टूबर, १९६७ में जबरन शासन के विभिन्न कार्य-भारों से मुक्त हुए। बढ़ी हुई आयु होने पर भी साधना-केंद्र पर पूर्णकालिक सेवा देने की इच्छा से घर-गृहस्थी का सारा दायित्व मुझे सौंप कर स्वयं इस भार से मुक्त हो गये।

सयाजी ने गृहस्थ जीवन के पारिवारिक दायित्व को सफलतापूर्वक निभाया। शासकीय आवास छोड़ने के पूर्व उन्होंने समय रहते परिवार के लिए घर भी बनवाया। घर के निर्माण में आर्थिक तंगी आयी। सयाजी ऊ गोयन्काजी ने अनुदान देने के लिए निवेदन भी किया। परंतु पिताजी ने स्वीकार नहीं किया। जितने धन की आवश्यकता थी उतना ऋण के रूप में लिया और यथासमय उसे लौटा दिया। ऋण चुकाने के प्रकरण का उल्लेख सयाजी ऊ गोयन्काजी ने अपने लेखों में, संस्मरणों में किया है।

सयाजी शासकीय सेवा से निवृत्त होने के बाद अपना सारा समय विपश्यना साधना सिखाने में ही लगाते थे। घर पर बिल्कुल नहीं आते थे। तब तक मैं भी शासकीय सेवा में लग चुका था। रविवार के दिन ध्यान-केंद्र पर जाया करता था। उनसे मिल कर औषधि आदि जो भी

आवश्यक वस्तुएं होतीं उन्हें खरीद कर दे आता। उस समय अधिक उम्र वाले व्यक्तियों के लिए एक शक्ति-वर्धक औषधि 'यूनिकेप-एम' प्रचलित थी, इसे प्रतिमाह उनके लिए भेजा करता था। जब मैं सयाजी से मिलने जाता, तब वे ध्यान-केंद्र के क्रियाकलाप के संबंध में, साधना करने वाले साधकों के संबंध में मुझे बताया करते थे। सयाजी पारिवारिक बंधन से कट कर, विपश्यना साधना के प्रसार में पूर्णतया लगे हुए थे। अपने धर्म-प्रवचनों में भी धर्म-प्रचार-कार्य की कठिनाइयों का सामना करते हुए परिपूर्णरूप से इसमें लगने की बात कहा करते थे।

सयाजी के निधन के बाद ध्यान-केंद्र उनके धर्म-शिष्यों द्वारा संचालित होते रहा है। प्रतिवर्ष १९ जनवरी को सयाजी के निधन-दिवस के अवसर पर उनकी स्मृति में सभी धर्म-शिष्य कुछ-न-कुछ कार्यक्रम आयोजित किया करते हैं। जब भी ध्यान-केंद्र से मुझे आमंत्रण प्राप्त होता है, सयाजी के परिवार के सदस्य के रूप में निश्चित रूप से भाग लेता हूं।

अक्टूबर, सन १९८९ में सयाजी ऊ गोयन्काजी के तृतीय पुत्र श्री मुरारीलाल गोयन्का व्यावसायिक कार्यवश रंगून आये थे, तब उन्होंने मुझसे भेंट की थी। बाद में मुझे यह ज्ञात हुआ कि हमारे परस्पर मिलने के इस प्रसंग को सुन कर सयाजी ऊ गोयन्काजी को अतीव प्रसन्नता हुई। फिर कुछ ही दिनों बाद उन्होंने विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि में आयोजित होने वाले विपश्यना सेमिनार सहित दस-दिवसीय विपश्यना शिविर में भाग लेने तथा बुद्ध तीर्थ-स्थलों की धर्म-यात्रा हेतु आमंत्रित किया। उस समय मैं शासकीय सेवा में कार्यरत था, अतएव अवकाश प्राप्त होने की कठिनाइयां थीं। अन्यान्य स्वतंत्र-व्यवसायियों की तरह सरलता से निर्णय नहीं ले सकता था। संबंधित अधिकारियों को क्रमशः आवेदन किया। सौभाग्य से बिना किसी व्यवधान के तीन सप्ताह का अवकाश प्राप्त हुआ तथा पारगमन की अनुमति भी। फरवरी, सन १९९० में भारत स्थित सयाजी ऊ गोयन्काजी के विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी में म्यंमा देश के कुछ अन्य सदस्यों के साथ दस-दिवसीय शिविर में, तथा विपश्यना सेमिनार में भाग लिया। मात्र तीन ही सप्ताह का अवकाश प्राप्त होने के कारण सेमिनार के बाद मैं धर्म-यात्रा पर नहीं जा सका, यथाशीघ्र यांगौं वापिस चला आया।

धम्मगिरि पर हम संध्या के समय पहुँचे थे। पहुँचते ही हमने अपना सामान निर्धारित कक्ष में रखा और सीधे धर्म-हॉल में पहुँचे। जब धर्म-हॉल में पहुँचा तो वहां टेप पर पिताजी की वाणी में **पञ्हावारविभङ्गे तिकपट्ठानं** का पाठ चल रहा था। विदेश में पहली बार अपने पिताजी की वाणी में तिकपट्ठान का पाठ सुना। बाद में पता चला कि प्रत्येक विपश्यना शिविर के प्रारंभ में इसी प्रकार सयाजी ऊ बा खिन की वाणी में रेकार्ड की हुई इस टेप को चलाया जाता है।

मेरे पिता सयाजी ऊ बा खिन साधना-शिविर में भाग लेने वाले साधकों को विपश्यना का परिचय देते थे। विपश्यान-साधना-विधि को समझाते थे। बुद्धोपदेश, बुद्धकालीन-घटनाएं, पुराने साधकों से संबंधित घटनाओं आदि का जब, जहां, जैसी, आवश्यकता होती थी, जिक्र किया करते थे। इसके उपरांत साधना संबंधी नियम-नियमावली का निर्देश देते हुए उसका स्पष्टीकरण किया करते थे।

सयाजी ऊ गोयन्काजी के संबंध में वे अक्सर चर्चा किया करते थे, जैसे माइग्रेन रोग के कारण गोयन्काजी का पिताजी से आकर मिलना, विपश्याना के शिविर में भाग लेना तथा उनका दान देना आदि के संबंध में यथाप्रसंग चर्चा किया करते थे। वहां पर ध्यान-केंद्र के लिए दान नहीं मांगने का नियम है। सयाजी ऊ गोयन्का जब से ध्यान-केंद्र में आने लगे तब से वे केंद्र के लिए आवश्यकतानुसार रास्ता सुधार का कार्य स्वयं करवाते, दरी खरीद लाते, भवन-निर्माण करवाते, पानी का नल, पाईप आदि मंगवा लिया करते थे। यह सारा काम वे स्वयं अपनी प्रेरणा से किया करते थे। मैंने देखा कि प्रसंग आने पर इन सभी बातों का उल्लेख सयाजी अपने धर्म-प्रवचनों में भी किया करते थे।

सयाजी ऊ गोयन्काजी ने सयाजी ऊ बा खिन के विपश्यना-ध्यान-केंद्र में १४ वर्षों तक विपश्यना साधना का अभ्यास किया। इसके अतिरिक्त, बाद में मुझे ज्ञात हुआ कि सयाजी ऊ बा खिन द्वारा दायित्व सौंपे जाने पर इन्होंने भारतीय बहुल नगर मांडले, रंगून, मेम्यो में भारतीय भाषा-भाषियों के लिए विपश्यना के शिविर भी लगवाये। ऊ गोयन्काजी की क्षमता से परिचित सयाजी ऊ बा खिन ने विपश्यना की इस परंपरानुसार विदेशों में धर्म सिखाने के लिए इनको अपने प्रतिनिधि के रूप में उत्तरदायित्व सौंपा। इस उत्तरदायित्व को सयाजी ऊ गोयन्काजी ने सफलतापूर्वक संपादित किया, यह प्रत्यक्ष दिख रहा है। सयाजी ऊ गोयन्काजी विपश्यना के प्रचार-कार्य को सफलतापूर्वक संपादित कर सकने का सारा श्रेय अपने उपकारक धर्म-पिता सयाजी ऊ बा खिन को ही देते हैं। ऊ गोयन्काजी यह मानते हैं कि उनकी सारी सफलता उनके आचार्य के संरक्षण से ही प्राप्त होती है। ऊ गोयन्काजी अपने उपकारक सयाजी ऊ बा खिन की परंपरानुसार विपश्यना साधाना-विधि को, उसमें बिना परिवर्तन किये ज्यों-की-त्यों अपने शिविरों में सिखाते हैं। मैंने स्वयं उनके द्वारा संचालित दश-दिवसीय शिविर में भाग लेकर प्रत्यक्ष देख लिया है। यथा – विपश्यना-भावना का अभ्यास करते समय साधक का सिर के सिरे से पैर की अंगुलियों तक, अनुलोम-प्रतिलोम, संवेदनाओं को अनित्य-बोध के साथ साक्षीभाव से प्रत्यवेक्षण करना, शिविर के दौरान मौन का पालन करना, निरामिष भोजन करना, कम से कम ९ घंटे ध्यान करना, ३ घंटे की सामूहिक साधना करना, संध्या के समय धर्म-प्रवचन सुनना, साधकों से दान नहीं मांगना आदि का ठीक-ठीक पालन किया जाता है। ऐसा मैंने स्वयं देखा कि सयाजी ऊ बा खिन द्वारा सिखायी गयी विपश्यना-विधि की परंपरा में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। बिना किसी बदलाव के विश्व के हर केंद्र में विपश्यना की विद्या ठीक वैसे ही सिखायी जाती है जैसे कि ऊपर उल्लेख किया गया है।

सयाजी ऊ गोयन्का अपने धर्म-प्रवचनों में इसकी चर्चा करते हुए अपनी कृतज्ञता प्रकट किया करते हैं कि धर्म-पिता सयाजी ऊ बा खिन का उपकार अनंत है, जिसे चुकाया नहीं जा सकता। इन्होंने अपनी पुस्तकों, निबंधों में भी इसका उल्लेख किया है। चाहे षष्ठ संगायन आधारित सीडी-रोम में त्रिपिटक का निवेशन किया गया हो, चाहे त्रिपिटक के ग्रंथों का मुद्रण करवा कर दान किया गया हो – गोयन्काजी ने हर कार्य का संपादन अपने धर्म-पिता सयाजी ऊ बा खिन को समर्पित होकर ही किया है। इसके अतिरिक्त भारत में विपश्यना की विद्या को पुनः भेजने वाले धर्म-पिता सयाजी ऊ बा खिन का अनंत उपकार मानते हुए ऊ गोयन्काजी ने इगतपुरी में **'सयाजी ऊ बा खिन ग्राम'** की स्थापना करायी है जो विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि के समीप स्थित है। मैंने देखा कि इन भावों को अभिव्यक्त करते हुए वहां पर कुछ एक शिलालेख भी स्थापित किये गये हैं।

इसके उपरांत जनवरी २००० ई. में सयाजी की जन्म-शताब्दी समारोह का आयोजन ब्रह्मदेश में किया गया। स्वयं सयाजी ऊ गोयन्काजी की प्रमुखता में संसार के ३२ देशों से ७५० साधक-साधिकाओं ने इस समारोह में भाग लिया। श्वेडिगोन पगोडा में सामूहिक साधना, धर्म-प्रवचन, धर्म-यात्रा आदि का सारा कार्यक्रम बहुत ही सौमनस्य वातावरण में सम्पन्न हुआ। इस समारोह का विडियो शूटिंग सयाजी ऊ गोयन्काजी द्वारा संचालित सभी विपश्यना केंद्रों में वितरित किया गया। सयाजी ऊ गोयन्काजी ने यह सब कुछ अपने धर्म- पिता सयाजी ऊ बा खिन के प्रति कृतज्ञता ज्ञापनार्थ उनके सम्मान में किया।

पहली बार धम्मगिरि पहुँचने पर मैंने सयाजी ऊ गोयन्काजी के परिवार, आचार्यों और साधकों द्वारा जो स्नेहपूर्ण स्वागत पाया वह आज भी मुझे याद है। उपकृत हूं। धर्म-पत्नी सहित जब परिवार के साथ गया तब भी सभी ने स्नेह से हमें हाथों-हाथ ले लिया। मन मोद से भर उठा। इसके लिए सयाजी ऊ गोयन्काजी का विशेष आभार मानता हूं। हालांकि मेरे पिता सयाजी ऊ बा खिन को शरीर छोड़े ३५-वर्ष हो चुका फिर भी वे आज भी विस्मृत नहीं किये गये हैं। इसका सारा श्रेय उनके द्वारा पुरातन विपश्यना-विधि को उसके मूल रूप में सँजोकर रखने और उसे पुष्ट करने को जाता है। सयाजी ऊ गोयन्काजी के प्रति मैं विशेष आभार प्रकट करता हूं जिनके द्वारा देश-विदेश के अपरिचित साधकों से भी परिचय हो रहा है। मेरे पिताजी ने अपने जीवनकाल में जो विपश्यना-विधि प्रदान की, सयाजी ऊ गोयन्काजी ने उसे यथावत प्रकाशित किया है। यह अपने आप में बड़े गौरव की बात है। अपने भावी परिवार के जिन सदस्यों को मेरे पिता सयाजी ऊ बा खिन ने नहीं देखा था और उन्हें धर्मदान नहीं दिया था, सयाजी ऊ गोयन्काजी ने उनको भी विपश्यना-विधि प्रदान की, इसके लिए अत्यंत कृतज्ञतापूर्वक उनका विशेष रूप से आभार ज्ञापित करता हूं। इसी प्रकार अनेकों का मंगल हो! सारे प्राणी सुखी हों! *("ग्लोबल पगोडा स्मारिका", २९ अक्टूबर, २००६ से साभार)*

नव नियुक्तियां

सहायक आचार्य

१. श्री देव किशन मूंदड़ा, नेपाल
२. श्री जय प्रसाद भेटवाल, नेपाल
३. श्री अशोक कुमार कर्ण, नेपाल
4. U Tun Hla, *Myanmar*
5. U Aung Than, *Myanmar*

बालशिविर शिक्षक

१. श्री प्रकाश चंद्र, कोटा (राज.)
२. श्रीमती मीनू अग्रवाल, कोटा (राज.)
३. श्री असलीम बरुआ, श्रीगंगानगर (राज.)
४. श्रीमती चन्नी शर्मा, चूरू (राज.)
५. श्री एकनाथ गडलिंग, यवतमाल (महा.)
६. श्री संजय धोळे, यवतमाल
७. श्री दिनेश देशमुख, अकोला
८. श्रीमती ज्योति देशमुख, अकोला
९. श्री पीतिकमल पाटिल, चंद्रपुर
१०. सुश्री प्रेवंदा पाटिल, नागपुर
११. श्री दुर्वास चौधरी, नागपुर
१२. श्री चंद्रभान उपासे, नागपुर
१३. श्री सुखलाल चौरे, सिवनी, (म.प्र.)
१४. श्रीमती देविका घाटोळे, बेतुल (म.प्र.)
15-16. Mr. Tom & Mrs. Alex Reveley, *U.K.*
17-18. Mr. Yves Paillard & Mrs. Nelly Richard, *France*

दोहे धर्म के

जीव डुबकियां खा रहा, भवसागर के बीच।
अहो भाग! गुरुवर मिले, लिया बांह भर खींच॥

अहो भाग्य! सद्गुरु मिले, कैसे संत सुजान!
मार्ग दिखाया मुक्ति का, शुद्ध जगाया ज्ञान॥

सद्गुरु की संगत मिली, जागा पुण्य अनंत।
सत्य धर्म का पथ मिला, करे पाप का अंत॥

सद्गुरु की करुणा जगी, दिया धर्म का सार।
संप्रदाय के बोझ का, उतरा सिर से भार॥

धन्य! धन्य! गुरुवर मिले, ऐसे संत सुजान।
छूटी मिथ्या कल्पना, छूटा मिथ्या ज्ञान॥

गुरुवर! अंतरजगत में, जगी सत्य की ज्योत।
हुआ उजाला, धर्म से, अंतस ओतप्रोत॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा.) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई-४०० ०१८
फोन: ०२२-२४९३ ८८९३, फैक्स: २४९३ ६१६६
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

घणा दिनां रुळता फिर्‌या, आंधी गळियां मांय।
गुरुवर दीन्यो राजपथ, पाछो मुड़णो नांय॥

अणजाण्या भटकत फिर्‌या, अँधियाळे री रात।
धरम जोत गुरुवर दयी, इब होयो परभात॥

रोम रोम किरतग हुयो, रिण न चुकायो जाय।
जीऊं जीवन धरम रो, यो ही एक उपाय॥

धरम दियो गुरुदेवजू, किसो'क अमित अमोल।
दुख स्यूं ब्याकुल जीव नै, दीन्यो इमरत घोळ॥

अहोभाग! गुरुदेवजू, प्रग्या दयी जगाय।
थोथै बाद-बिवाद रा, बंधन दिया छुड़ाय॥

गुरुवर दीनी साधना, चख्यो धरम रो स्वाद।
संगत सुखदा संत री, मन रो मिट्यो विसाद॥

आकांक्षा इंटरप्राईसेस
ई - १/८२, अरेरा कालोनी, भोपाल (म. प्र.) - ४६२०१६
फोन: (०७५५) २४६१२४३, २४६२३५१; फैक्स: (०७५५) २४६८१९७
Email: aeent@airtelbroadband.in
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) २४४०८६, २४४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५५०, कार्तिक पूर्णिमा, ५ नवंबर, २००६**

वार्षिक शुल्क रु. ३०/-, US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. ५००/-, US $ 100.
'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१. Regn. No. **LII/REN/RNP-46/2006-08**

Licenced to post **without Prepayment of postage** -- Licence number-- **LII/RNP-WPP-03**

If not delivered please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (०२५५३) २४४०७६, २४४०८६
फैक्स : (०२५५३) २४४१७६
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vri.dhamma.org